भारतीय शास्त्रीय कला के साधक विरेंद्र सिंह राही

प्राप्तिः 02.09.2024
स्वीकृतः 18.09.2024

71

डॉ ओमप्रकाश मिश्रा
प्रधानाचार्य
मिनर्वा इंस्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेंट
एंड टेक्नोलॉजी देहरादून, उत्तराखंड
ईमेलः *mishraop200@gmail.com*

रजत चौहान
शोध छात्र
मिनर्वा इंस्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेंट
एंड टेक्नोलॉजी देहरादून, उत्तराखंड

सारंश

रेखा, आकृति और रूप ने दृश्य कलाओं की दुनिया बनाई है। वे दिन गुफावासी अपनी गुफा की दीवारों पर शिकार के दृश्य बनाते थे, अब बहुत दूर चले गए हैं। लेकिन उनकी कला और उनकी दुनिया ने आने वाली पीढ़ियों को उनके कठिन (कच्चे) जीवन के बारे में बताया है। सभ्य कला में उनकी अपरिष्कृत कल्पना और सीधी (और विषम) रेखाओं का उपयोग नहीं किया जाता है। सभ्य कला की रेखाएँ लयबद्ध, घुमावदार रेखा ने सभी प्रकार की शारीरिक रचनाओं में भाग लिया हैं, वे आनंददायक होती हैं। प्रकृति में घुमावदार रेखा ने सभी प्रकार की शारीरिक रचनाओं में भाग लिया है

मानव, पशु या वनस्पति। ससंस्कृत मनुष्य ने सीधी रेखा से कहीं ज्यादा घुमावदार रेखा का उपयोग किया है। 20वीं सदी के आरंभ और मध्य के कलाकार अपनी संस्कृति में निहित थे और लोक व धार्मिक स्तरों पर भारतीय परंपरा के बारे में अच्छी जानकारी रखते थे। वीरेंद्र सिंह राही भी इन्ही कलाकारों में से एक है जो अपनी भारतीय संस्कृतिक से जुड़े रहे और अपने कार्यों को भारतीय स्वरूप प्रदान किया। इस शोध पत्र में हम वीरेंद्र सिंह राही के चरित्र और उनकी विशेषताओं को जानेंगे और यह जानेंगे कि कैसे राही की कला भारतीय कलाकारों को प्रेरित करती है।

मुख्य बिन्दु

राही, भारतीय, संस्कृति, कला, प्रतिमाएं, प्रतिमाओं, रेखा

प्रस्तावना

वीरेंद्र सिंह का जन्म 9 अगस्त सन् 1929 को उत्तर प्रदेश के हमीरपुर के खरेला कस्बे में हुआ था। राही एक चित्रकार, अध्यापक, लेखक, और एक स्वतंत्रता सेनानी थे। इनके पिता ठाकुर गोपाल सिंह एक अध्यापक थे, जो मुंशी प्रेमचंद और दीवान शत्रुघ्न जैसे अन्य स्वतंत्रता संनानियों के सहयोगी थे। उनकी माता राजकुंवर बाई स्वतंत्रता संग्राम में अपने पति के साथ कंधे से कंधा मिलाकर साथ खड़ी थी। उनके परिवार को अंग्रेजी हुकूमत के दौरान कारावास का सामना करना पड़ा। जिसके फलस्वरूप वीरेंद्र सिंह को साहित्यिक वातावरण, कलात्मक उछाल और छोटी उम्र से ही क्रांतिकारी जोश विरासत में मिला।

उनकी यात्रा एक युवा स्वतंत्रता सेनानी के रूप में शुरू हुई। जब विरेंद्र सिंह स्वतंत्रता आंदोलन में शामिल हुए तो ये पंडित परमानंद झांसी, लोटन सिंह वर्मा और स्वामी ब्रहमानंद जैसे महान स्वतंत्रता सेनानियों के संपर्क में आए और पूरी यात्रा में उनके साथ जुड़े रहे। उन्होंने क्षेत्र में कई स्वतंत्रता आंदोलनों में भाग लिया और गिरफतार भी हुए लेकिन बच निकले और भाग गए। इनके स्वतंत्रता सेनानी होने का एक उतचत उदाहरण इनके द्वार बनाई गई झांसी की रानी के एक चित्र में देखने को मिला है। जिसमें झांसी की रानी, एक सफेद घोड़े पर सवार, अंग्रेजों का सामना कर रही हैं।

उन्होंने कम उम्र में ही घर का त्याग कर दिया अजमेर चले कए। जहां वे स्वर्गीय उस्ताद राम सहाये (जो अलवर राज्य के पारंपरिक दरबारी चित्रकार थे) के संपर्क में आए। इन्होंने ही वीरेंद्र सिंह को जयपुर जाने की सलाह दी जहां इनकी मुलाकात रामगोपाल विजयवर्गिया और शैलेंद्र नाथ डे से हुई।

सन् 1947–48 तक विरेंद्र सिंह ने महाराजा कॉलेज ऑफ आर्ट्स, जयपुर में राम गोपाल विजयवर्गीया के अधीन कला अध्ययन किया। इस दौरान इन्होंने कई पुरस्कार जीते। विरेंद्र सिंह की कलात्मक प्रतिभा से प्रभावित होकर शैलेंद्र नाथ डे ने इनकी सिफारिश नंदलाल बोस से की। जब विरेंद्र सिंह शांतिनिकेतन पहुंचे तो उन्होंने पाया की प्रवेश ही बंद हो चुके हैं। लेकिन तब भी इन्होंने हिम्मत नहीं हारी और नंदलाल बोस के अधीन शिक्षा ग्रहण करने लगे। विरेंद्र सिंह आर्थिक रूप से काफी कमजोर थे लेकिन कला भवन में प्रवेश करने के लिए इन्होंने एक महीने तक प्रतिक्षा करी। जब उनके गुरू नंदलाल बोस को इन सब बातों का पता लगा, तब उन्होंने वीरेंद्र सिंह का कला भवन में प्रवेश भी दिलावाया और कला भवन की उनकी फीस भी भरी। बाद में वीरेंद्र सिंह को शांतिनिकेतन में छात्रवृत्ति प्रदान की गई। सन्1948–1953 तक विश्वभारती शांतिनिकेतन में नंदलाल बोस के अध ीन प्रतिशक्षित हुए और अनके मार्गदर्शन में वीरेंद्र सिंह ने बंगाल शैली, अजंता फ्रेस्को शैली,, वॉश टेंपरा और लघु चित्रकला जैसी विभिन्न भारतीय पारंपरिक शैलियों में निपुणता प्राप्त की और 1953 में शांतिनिकेतन से स्नातक की उपाधि प्राप्त की। विरेंद्र सिंह ने 1953 में शांतिनिकेतन में अपना पहला एकल प्रदर्शन किया। राही की उपाधि उन्हें देवेंद्र

उनकी सरहना करती थी। और यह कहती थी कि ''आप कितने भाग्यशाली हैं। ईश्वर ने आपको इतनी इच्छी कला दी जिससे आप दो–तीन रेखाओं द्वारा चलते–फिरते जीव को आकृतियों में बदल

देते हैं। रेखाओं में खींच लेते हैं यही एक कलाकार के निपुण होने की पहचान है। मैं कितनी अभगिन हूं जो मुझे अभिव्यक्त करने की यह कला नहीं आती।'' राही हँसकर कहते कि तुम ऐसा क्यों सोचती हो यह सब स्केच की स्फूर्ति तुम्हारी प्रेरणा से ही तो मुझे मिली है। तुम मेरे जीवन में यदि नहीं आती, तो यह कला भी नहीं होती। तुम मेरी शक्ति हो, तुम मेरी प्रेरणा हो, जो हमेशा मुझे उत्साहित करती हो, मेरे काम की सराहना करती हो, जिससे काम करने की मेरी उत्सुकता और लगन और भी बढ़ जाती है। राही को अपनी धर्मपत्नी संतोष से कई बातें एसी मालूम हुई जो उन्हें पता नहीं थी क्योंकि उनकी पत्नी ने इतिहास में एम.ए. किया था तथा उन्हें चंदेल वंश के इतिहास

फँस गये की काम करने का समय ही नहीं निकाल पाए। जिसका कारण राही की पत्नी संतोष का स्वास्थ्य था। पत्नी का स्वर्गवास हो जोन के बाद राही इतने टूट गये कि अपने आप को सम्भाल नहीं सके और शोक में डूबता चले गए। ऐसी परिस्थितियों में श्रीमदभगवत् गीता ने मुझे सहारा दिया। और इन्होंने फिर से हिम्मत बटोरी, साहस जुटा कर एक अन्तराल के बाद फिर से तूलिका उठाई और अपने दुखों को चित्रों से भर दिया और 'शव का तांडव नृत्य', 'शिव का विलाप' जैसे कई चित्र बनायें चित्रकार होने का कर्त्तव्य राही ने हमेशा निभाया। इन्होंने शुरू से ही एक संकल्प लिया था की किसी भी कला के व्यापारी, या आर्ट गैलरी को अपना चित्र बेचने के लिए नहीं दूंगा। अपना काम करूंगा, अपने आनंद के लिए, अपने सुख के लिये। मैंने अपेन गुरू नन्दलाल बोस की आज्ञा का हमेशा अनुसरण किया। हालांकि कई उनके शिष्य मेरे समकालीन मित्र इस बात को भूल गए। उन्होंने अपनी कला को बाज़ार में।

पुरस्कार –

- 1988 में उन्हें अखिल भारतीय ललित कला एवं शिल्प सोसायटी, नई दिल्ली द्वारा ''कला श्री की उपाधि प्रदान की ।
- 1989 में महाराणा मेवाड़ फाउंडेशन, उदयपुर द्वारा कला में उनके सराहनीय योगदान के लिए **''महाराजा सज्जन सिंह पुरस्कार''** से सम्मानित किया गया।
- 2001 में साहित्य कला परिषद द्वारा **''परिषद सम्मान''**।
- 2003 में प्रथम अंतरराष्ट्रीय द्विवार्षिक, बीजिंग, चीन में **''विशेष सम्मान''**।
- 1948 में जयपुर स्कूल ऑफ आर्ट द्वारा **''महारानी गायत्री देवी पदक''**।

विषय वस्तु –

वीरेंद्र सिंह राही के कार्यों के विष्य और शैली भारतीय पौराणिक कथाओं, अजंता और एलोरा की भित्ति चित्रों, भारतीय लघु चित्रकला और भारत की लोक संस्कृति से प्रेरित हैं। उनकी कृतियाँ, गीत गोविंदा, रामायण, महाभारत और राजस्थानी कहानियों से कहानियाँ बयान करती हैं।

राही और खुजराहो –

राही के जीवन में खजुराहो का एक विशेष स्थान रहा। खजुराहो की मूर्तिकला और शिल्प कला से ही राही को कार्य करने की प्रेरणा मिली। राही ने इन्हीं प्रतिमाओं और मूर्तियों को अपने रेख चित्रों में कैद किया। राही ने निरंतर रूप से खजुराहो के मंदिरों, मूर्तियों के स्केचेज बनाए हैं। राही यहां क प्रतिमाओं में, पत्थरों में, सौंदर्य का अनुभव करते हैं, और स्वयं को धन्य मानते है कि ऐसी वीर भूमि

में उनका जन्म हुआ। राही ने खजुराहो की शिल्प कला को, प्रतिमाओं को अपनी स्मृति में बांधा और उनकी

तुम कितने रूपवान हो, सौंदन के धनी हो, कितने भव्य हो, थोड़ा सा अपनी भव्यता का प्रसाद मेरी झोली में भी डाल दो। कितना ईश्व सौंदर्य तुम्हारे भीतर समाया हुआ है, वही सौंदर्य मेरी रेखाओं में, तूलिका में भर दो। मेरी रेखाएं जीवंत उठे, प्राणों से भर जाए और बोल उठे और वह सौंदर्य जो मैं दूसों तक पहुंचा सके। खजुराहो की प्रतिमाओं को अपनी रेखाओं में खीचते हुए राही ने उन दर्शकों को भी अपनी रेखाओं में बांध जो इस भव्यता का आनंद लेने खजुराहो में उपस्थित थे। खजुराहो की इन प्रतिमाओं और मंदिरों को कोई मुकाबला नहीं है। यही भारतीय संस्कृति की पहचान है, और भारत की राष्ट्रीय धरोहर हैं। ये मंजि भारतीय कला और संस्कृति का एक उच्चतम उदाहरण प्रदर्शित करते हैं। धार्मिक दृष्टिकोण से जहां मंदिरों की साज–सज्जा हेतु दीवारों पर देवी–देवताओं या धार्मिक विषयों माध्यम बनाकर कलाकार नक्काशी करते हैं, वही इसके विपरीत खजुराहो के मंदिरों की बाहरी दीवारों मिथुन प्रतिमाएं उकेरी गई है। इन प्रतिमाओं में संभोग करते नग्न जोड़े आलिंगनबद्ध है। प्रेमी और प्रेमिका के मिलन को दर्शाते है। यही खजुराहो के मंदिरों की मुख्य विशेषता है। ये मूर्तियां कामवासना, कामुकतो, संभोग को दर्शाती तो तो है, किंतु इसी के विपरीत उनके चेहरे, समाधि जैसी अवस्था में है। स्त्री और पुरुष दोनों के ही चेहरों में एक दैविक भव्यता झलकती है। वे मिथुन प्रतिमाएं मंदिर की बाहरी दीवारों पर उकेरी गई है, लेकिन मंदिरों के गर्भ में भगवान ही विराजामान और हिंदू आस्था का प्रतीक हैं, तो क्यों ही इन दीवारों पर इस प्रकार की प्रतिमाएं बनाई गई होंगी? इस पर राही कहते हैं, कि यह संसार मंदिर की बाहरी दीवार की ही भांति है और जब तक इस बाहरी दीवार से पूरी तरह मुक्ति नहीं मिलती तब तक मनुष्य भीतर प्रवेश नहीं कर पाएगा। अर्थात् इस संसार में हर प्रवृति के लोग है, अच्छे भी और बुरे भी। सभी में कुछ न कुछ अवगुण होते हैं और इन अवगुणों से मुक्त होने का एकमात्र मार्ग भक्ति और आध्यात्म है। और जब हम इस मार्ग पर अग्रसर होंगे तभी हमें ईश्वर की प्राप्ति होगी। राही यह भी समझते है की अगर हमारे भीतर कामवासना नहीं है तो भक्ति भी पैदा नहीं हो सकती है क्योंकि भक्ति–वासना का ही शुद्धतम रूप है। एक बार कोणार्क, पुरी, भुवनेश्वर व खजुराहो के मन्दिरों को मिट्टी में दबा देने की बात महात्मा गांधी ने कही थी ताकि लोग उनके दर्शन नहीं कर सकें। यह तो भला हो गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर का तथा उनके सहयोगी महान शिल्पी नन्दलाल बोस का जिनके विरोध से आज ये खजुराहो के मन्दिर सुरक्षित खड़े हैं। वरना भारत की संस्कृति और कला का एक महत्वपूर्ण उदाहरण सदा

सुन्दर नहीं हो सकती। इन स्त्री प्रतिमाओं को देखने पर ऐसा प्रतीत होता है की अलग अलग स्त्री के अलग अलग अंगो को साथ में जोड़कर एक पत्थर को सुंदर स्त्री का स्वरूप प्रदान किया गया हो। स्तन एक सुन्दर स्त्री के है, चेहरा किसी दूसरी सुन्दर स्त्री का है, पैर किसी और स्त्री के हैं। बाँह, उंगलियों, कमर, नितम्ब और किसी सुन्दर स्त्री के हैं। किसी एक ही स्त्री में ये सभी एक साथ मिलना शायद ही संभव है राही ने जीवन में इतने सुन्दर प्रेम, प्रार्थना और समाधि के अंकन कहीं नहीं देखे अगर कहीं कोई चीज संभोग से समाधि तक उठानेवाली देखी जा सकती है तो वे खजुराहो की प्रतिमाएं हैं, जिन्होंने कीचड़ को कमल बना दिया। इनके अंगों के साथ–साथ इनके चेहरों को देखिये

जो समाधि में लीन हैं। राही ने इन प्रतिमाओं से रेखाचित्र को निर्मित किया है। इन्होंने अपनी रेखाओं को अधिक गीतात्मक और आकृतियों को अधिक सांस्कृतिक बनाने पर ध्यान केंद्रित किया है। राही ने जिन काव्यात्मक रेखाओं और रागात्मक या आकर्षक रंगों में महारत हासिल की है, उनका आनंद हर कोई ले सकता है। राही ने भारतीय महिलाओं को उनके स्वाभाविक सामाजिक या पारिवारिक संदर्भ में चित्रित किया है। ग्रामीण स्तर के भारतीय परिवार की सदस्य के रूप में महिला (अपने बच्चे को गोद में लिए या उसके साथ खेलते हुए) रेखांकन किया। एक अलंकृत नारी के रूप में जब वह नहा रही हो या अपना श्रृंगार कर रही हो, उसके बाएं हाथ से उसके चेहरे के सामने एक दर्पण हो। एक रोमांटिक नायिका के रूप में, अपने प्रेमी या प्रियतम का इंतजार करते हुए, अपने हाथ में लिए तोते से बात करते हुए। अपनी महिला मित्रों की संगति में एक सामाजिक व्यक्ति के रूप में। या एक पत्नी के रूप में जो किसी पेड़ या तकिये के सहारे लेटी हुई अपने पति के बारे में सोच रही है जो कहीं दूर देश में है। या राधा और कृष्ण की अच्छी प्रेम प्रसंगों के रूप में राही ने हर तकनीक में कार्य किया किंतु उनके स्याही स्केचेस ज्यादा प्रसिद्ध है। इन चित्रों में राही ने घुमावदार रेखाओं का प्रयोग कर चित्रण किया है, फिर चाहे वह पशु हो या मानव । इन घुमावदार रेखाओं के होने से आकृतियों में लय उत्पन्न होती है। स्त्री आकृतियों को देखकर खजुराहो के मंदिरों की मूर्तियों का आभास होता है। ये चित्र उन्हीं के जैसे प्रतीत होते हैं। इन चित्रों के माध्यम से हम यह जान सकते हैं कि ष्ईश्वर द्वारा बनाई गई इस सृष्टि में किसी भी रूप या किसी भी आकृति में कही भी सीधी रेखाओं का प्रयोग नहीं है। सूर्य, पृथ्वी वृक्ष, जीव–जंतु, पशु–पक्षी, मनुष्य, आदि सभी की रचना में घुमावदार रेखाओं का ही प्रयोग हुआ हैं। एक प्रभावशाली सांस्कृतिक कलाकार हैं, जिन्होंने 50 और 60 के दशक में ही स्वयं की पहचान बना ली थी, और आज भी बनाए हुए हैं। राही भारतीय और पाश्चात्य कला दोनों से ही परिचित थे, किंतु इन्होंने भारतीय शास्त्रीय कला और संस्कृति केा आगे बढ़ाने का कार्य किया। इन्होंने कभी भी बेचने या व्यापार हेतु कार्य नहीं किया है, बल्कि स्वयं की आनंद प्राप्ति के लिए कलाकृतियों को निर्मित किया है, जो की इनकी एक खास विशोषता रही है। और इन्हें उन कलाकारों से अलग बनाती है जो केवल अपने स्वार्थ या कमाने हेतु कार्य करते हैं। राही ने निस्वार्थ भाव से अपनी कला को आगे बढ़ाने का कार्य किया। उनके रेखाचित्र लय और काव्यात्मक उदात्तता के प्रति उने प्रेम की दशति हैं। इनके द्वारा बनाए गए खजुराहों के रंखाचित्र हमारी धारणा को पुनर्जीवित करते है। समानता, सौंदर्य, और लय के प्रति हमार प्रेम को प्रेरित करते है। राही अपने तरीके से हमें उस माहौल में से जाते हैं, जहां हम जीवन की बेहतर चीजों की अधिक स्वाभाविकता से और निश्चित रूप से अच्छे तरीके से सराहना कर सकते हैं।

संदर्भ –

1. http://wikitia.com/wiki/Virendra Rahi

2. राही वी. एस. , 2011 सर्ज ऑफ इमोशंस खजुराहो, की धूल भरी स्मृतियाँ, भरत प्रताप सिंह, पृ0. **12–15**

3. गुर्टू शचीरानी, कला के प्रणेता, दिल्ली के कलाकार, इंडियन पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली, पृ0 **365–369**